भैया एक्सप्रेस

–अरुण प्रकाश

इज़ ही ए भैया?

ट्रेन की रफ्तार तेज होती जा रही थी। दरवाजे से लटके रामदेव के लिए धूल भरी तेज हवा में आँख खुली रखना मुश्किल था। कब तक लटका रहेगा बंद दरवाजे पर? रामदेव ने दरवाजे पर जोर से थाप मारी। उसके कंधे से लटकता झोला गिरते-गिरते बचा।

कुछ देर बाद दरवाजा खुला। वह सँभलता हुआ अंदर घुसा और दरवाजा भिड़ाकर डिब्बे के गलियारे में गमछे से मूँगफली के छिलके और सिगरेट के टोंटों को हटाने लगा। दरवाजा खोलने वाले फौजी ने घृणा से मुँह बिचकाया 'भैणचो..मरने चले आते हैं! ये रिजर्वेशन का डिब्बा है। तेरा रिजर्वेशन है?'

रामदेव चुप! अठारह साल के साँवले, पतले रामदेव के लिए यह पहली लंबी यात्रा थी। अब तक उसने तिलरथ के अगले स्टेशन बरौनी तक ही रेल यात्रा की थी। रिजर्वेशन से उसका पाला ही नहीं पड़ा था। पहली दफा वह बिहार तो क्या, अपने जिले से भी बाहर निकला था। अपने भाई विशुनदेव से उसने जरूर सुन रखा था कि पंजाब जाने में क्या-क्या परेशानी होती है। दिल्ली होकर पंजाब जाने में सुविधा होती है। और, आसाम मेल दिल्ली जाती है। बरौनी स्टेशन पर डिब्बे में लोग बोरे में सूखी मिर्च की तरह ठूँसे जाते थे। आखिर ट्रेन खुल गई तो जो डिब्बा सामने आया, उसी में दौड़कर लटक गया था।

'टिकट है!' रामदेव ने बमुश्किल कहा।

'टिकट होने से क्या होता है? यह रिजर्वेशन का डिब्बा है, समझे?'

अब रामदेव क्या करे, चुप, डरी आँखों से फौजी को देखता रहा। पुरानी बेडौल पैंट और हैंडलूम की बेरंग शर्ट पहनकर रामदेव अपने मोहल्ले में ही आधुनिक होने का स्वांग कर सकता था। इस नई दुनिया में सारी चीजें अचंभे से भरी थीं।

कुर्ते और शलवार में लिपटी, सामने के बर्थ पर लेटी औरत ने अंग्रेजी उपन्यास को आँखों के सामने से हटाया और उस फौजी से पूछा, 'सिविल कंपार्टमेंट इज लाइक धर्मशाला...इज ही ए भैया?'

'हाँ लगता तो है!' फौजी भुनभुनाकर रामदेव की ओर मुखातिब हो गया, 'तुमको कहाँ जाना है?'

'पंजाब।'

रामदेव को लगा कि वह यहाँ बैठा रहा तो इन बड़े लोगों की नजर में चढ़ा रहेगा। वह उठा और बाथरूम के सामने वाले गलियारे में अंगोछा बिछाकर झोले का तकिया बनाकर लेट गया। ट्रेन में घुसने से लेकर पिछले एक सप्ताह तक के दृश्य उसकी आँखों के सामने घूम गए।

दसवीं का इम्तिहान खत्म होते ही माई पंजाब जाने-आने के लिए पैसे का इंतजाम करने लगी थी। गाँव का कोई आदमी मार-काट की वजह से पंजाब जाकर उसके भैया विशुनदेव को ढूँढ़ने को तैयार नहीं था। कई लोगों से मिन्नत करने के बाद, माई रामदेव को ही पंजाब भेजने पर तैयार हो गई। पैसों की समस्या साँप की तरह फन काढ़े फुकार रही थी। पुश्तैनी पेशा-अनाज भूनने में क्या रखा है? कनसार में अनाज भुनवाने लोग आते नहीं। मकई की रोटी अशराफ लोग खाते नहीं। दाल इतनी महँगी है कि लोग चने की दाल बनवाएँगे कि कनसार में चना भुनवाकर सत्तू बनवाएँगे? उस पर इतनी मेहनत-गाँव के बगीचों, बंसवाड़ियों में सूखे पत्ते बटोरकर जमा करो, उन्हें जलाकर अनाज भूनकर पेट की आग ठंडी करो। किसी तरह एक शाम का भोजन जुट पाता। आखिर माई उपले थापकर, गुल बनाकर बेचने लगी थी। तब किसी तरह भोजन चलने लगा। लेकिन कोई काम आ पड़ता तो कर्ज लेने के अलावा कोई रास्ता नहीं बचता था। इस बार भी पंडितजी ने ही पैसों की मदद की। भैया की शादी में कर्ज बढ़ा तो मुश्किल हो गई। मूल तो मूल, सूद सुरसा की भाँति बढ़ने लगा। आखिर भैया को थाली-लोटा, कंबल, वंशी लेकर कमाने पंजाब जाना पड़ा। वहाँ से वह पैसा भेजता तो माई सीधा पंडितजी को जाकर देती। कर्ज चुकने को ही था कि अचानक सब कुछ बंद।

पंजाब में खून-खराबे की खबर मिलती तो माई के साथ-साथ रामदेव का भी दिल डूबता। माई को पड़ोसी ताने मारते। इतना ही दुख था तो खून-खराबे में बेटे को कमाने पंजाब काहे भेजा? अगर विशुनदेव पंजाब नहीं जाता तो वे सब बेघर हो जाते। जनार्दन उनके घर की जमीन खरीदने की ताक में था। पंडितजी का तकाजा तेज हो रहा था। घर ही बचाने-बसाने विशुनदेव को पंजाब जाना पड़ा था। बहू आती तो कहाँ रहती, क्या खाती? नई जिंदगी के कोंपल को माई कैसे मसलने देती? भरे मन से माई ने विशुनदेव को पंजाब जाने दिया था। सब ठीक-ठाक होता जा रहा था कि अचानक सब कुछ बंद।

लेटे-लेटे रामदेव ने कमीज की चोर जेब में हाथ डाला। जेब में रेलवे टिकट, भाई के पत्तेवाला पोस्टकार्ड और पैसों को छूकर उसे इत्मीनान हो आया। झोले का तकिया ठीक से जमाकर आँख बंद कर सोने की कोशिश की। ट्रेन की खटर-पटर, गलियारे में फैली बदबू थी ही। डर भी था और इतना था कि नींद में भी पंजाब-सी उथल-पुथल थी। विशुनदेव! ऐ विशुनदेव!

भैया पंजाब से पिछली दफा लौटा तो वहाँ के किस्से खूब सुनाता था। माई भी रोज रात उससे पंजाब के बारे में पूछती थी।

'रोटी खाने? भात नई मिलै छौ?'

'माई, ऊ लोग सब खाना के रोटी कहै छै! इ बड़का गिलास में चाह! ओह चाह हिया कहाँ?'

'मर सरधुआ! चाह तो हियैं बनबे करेई छै!'

'नइगे माई, ऊ सब बनिहारवाला चाह में हफीम के पानी मिलाए दै छै, वैइसे थकनी हेंठ भे जाइछै! अ बनिहार लोग खूब काम कइलक।'

'कत्ते देर काम करै छहि?'

'सात बजे भोर सै छ बजे साँझ तक! बीच में रोटी खाइके छुट्टी-एक घंटा।'

'सब ताश खेललकर, हम्में अपनी बँसुरी-बंजइलौं। हमर मलकिनी ठीक छौ। हाँक पारतौ-ए विशुनदेव! ऐ विशुनदेव! मलकिनी कै हमरी बाँसुरी बजेनाई खूब नीक लगैइछै! विद्यापति, चैतावर सुने लेल पागल। पढ़लो छे गे माई बी.ए.पास!'

'खूब सुखितगर मालिक छौ?'

'खूब कि फटफटिया, ट्रैक्टर, जीप महल सन घर। दूगो बेटा। दिल्ली में नौकरी में

लागल, टीभी से हो छै!'

'उ कथी?'

'जेना रेडियो में खाली गाने बोलई छै ने, टीभी में गाना के साथ-साथ सिनेमा एहन फोटूओ देखेवई छै!'

'मालिक मारै-पीटे त नईं न छौ!'

'कखनो-कखनो, गाली हरदम भैनचो... भैनचो बकै छै।'

'की करभी, पैसा कमेनाइ खेल नईं छै। मन त नईं लागै होतौ?'

'गरीब नईं रहने माई, पंजाब कहियो नईं जैति अइ र इ पैसा...'

विशुनदेव का गौना सामने था। खर्चा जुटाने उसे दूसरी बार भी पंजाब जाना पड़ा। अपने इलाके में न साल भर मजदूरी का उपाय, और मजदूरी भी पंजाब से आधी। विशुनदेव पंजाब से थोड़ा भविष्य लाने गया था।

रात में कोई गाड़ी पंजाब नहीं जाती।

नियॉन लाइट से जगमगाती नई दिल्ली स्टेशन के प्लेटफॉर्म पर उतरते ही उसे लगा कि इतने लोगों के समुद्र में वह खो जाएगा। भीड़, धक्कम-मुक्का, अजनबी लोग और इतनी रोशनी! उसने अपने सीने को कसकर दबा लिया ताकि टिकट, पैसा और पते वाला पोस्टकार्ड कोई मार न ले। वह ठिठक गया, पता नहीं गेट किधर है। आखिर भीड़ में वह घुस गया। ओवर ब्रिज पारकर स्टेशन के बाहर आ गया।

बाहर टैक्सरी, कार और थ्री व्हीलर की कतारें। रात का समय। सब कुछ स्वप्न-लोक-सा था जैसा उसने हिंदी फिल्मों में देखा था। आसाम मेल रास्ते में ही पाँच घंटे लेट हो गई थी। उसे मालूम था कि दिल्ली से ट्रेन या बस से उसे अमृतसर जाना पड़ेगा। वह मुसाफिरखाने की ओर बढ़ा। पंजाब जाने वाली गाड़ी के बारे में किससे पूछे, सब तो अफसर की तरह लग रहे थे। मुसाफिरखाने के एक कोने में कुछ साधारण मैले-कुचैले कपड़ों में थकी-बुझी आँखों वाले लोग टिन की बदरंग पेटियों के पास बैठे थे। उन्हीं की तरफ बढ़ा।

'ऊ सामने वाली खिड़की पर जाकर पूछो!'

खिड़की पर कई लोग जमे थे। जब लोग हटे तो उसने बाबू से पूछा।

'बाबू, अमृतसरवाली चली गई?'

'हाँ!'

'अब दूसरी गाड़ी कब जाएगी!'

'अब तो भैया, कल जाएगी!'

'इ तो बड़ा स्टेशन है?'

'आजकल रात में कोई गाड़ी पंजाब नहीं जाती।'

वह मुड़ा, तो बाबू भी अपने दोस्त से बात करने लगा।

'सारे हिंदुस्तान को पता है, रात में कोई ट्रेन पंजाब नहीं जाती फिर भी पूछ रहा था!' बाबू के दोस्त के स्वर में उपहास था।

'बिहारी भैया था!' बाबू फिस्स से हँस पड़ा।

'जलंधर, लुधियाने, सारे पंजाब में ये लोग भरे हैं।'

'अरे बिहार से आनेवाली गाड़ी को पंजाब में भैया एक्सप्रेस कहते हैं! उस तरफ हर गाड़ी में ये लोग ठुँसे रहेंगे।'

'वहाँ इन्हें काम नहीं मिलता?'

'काम मिलता तो पंजाब थोड़े ही मरने जाते! भूख थोड़े ही रुकती है, इसलिए भैया एक्सप्रेस चलती रहेगी... सरकार की पटरी, सरकार की गाड़ी सब है ही!'

घर पंजाब हो गया है

'आजकल' रामदेव के लिए बड़ा शब्द है।

पिछले चार महीने-सोते-जागते पहाड़ की तरह गुजरे। भैया कैसा होगा? पंजाब में बहा खून का हर कतरा, वहाँ चली हर गोली माई को लगती। रेडियो विशुनदेव का हाल-चाल थोड़े ही बोलेगा। माई फिर भी पंडित जी के यहाँ रेडियो सुन आती। वह भी चाय की दुकान पर अखबार पढ़ आता। रजिस्ट्री चिट्ठी लौट आई तो माई रात-भर रोती रही। बेगूसराय जाकर उसी पते पर तार भिजवाया लेकिन कुछ नहीं पता चला। माई मन्नतें माँगती, पंडित जी के पंचाँग से शगुन निकलवाती, रो-धोकर उपले-गुल बेचने फूटलाइजर टाउनशिप निकल जाती। इतनी मेहनत पर मौसी टोकती तो माई का एक ही जवाब होता, 'एगो बेटा पंजाब में, इ रमुआ पढ़ लिए जे एकरा पंजाब नईं जाए पड़ैय।'

भौजी के यहाँ से अक्सर पूछवाया जाता-कोई खबर मिली? माई को लगता-शादी टूट जाएगी। कोई कब तक जवान बेटी को घर बिठाए रखेगा। माई को लगता, बेटे का पता नहीं, पतोहू छूट रही है। कोशिश करती कि किसी तरह बिखरते घर को आँचल

में समेटे रहे।

'रमुआ से पुतोहू के बियाह के देबैई', माई से यह सुनते ही रामदेव शर्म से काठ हो गया था। भौजी की साँवली, निर्दोष, बड़ी-बड़ी आँखों वाला चेहरा उसके सामने घूम गया था। अशराफ़ के घर में ऐसा होगा? शादी के बाद भैया पंजाब से लौट आया तो? माई पागल है!

लेकिन माई ने हारना नहीं सीखा था। जो कुछ बचा था, उसे छाती से चिपकाए रहना चाहती थी। एक चक्कर डाक बाबू के यहाँ लगा लेती। 'लोभ में बेटे को पंजाब भेज दिया, अब काहे को रोज चिट्ठी के लिए पूछती हो?' पोस्टमैन उसे झिड़क देता।

माई का सूखता शरीर, पंडित जी का सूद, जनार्दन का मंसूबा, भौजी की उदासी, भाई के जीवन का संशय, रोज की किचकिच, माई का रुदन...रामदेव को लगता-घर पंजाब हो गया है। रात-रातभर सो नहीं पाता। पढ़ता-लिखता क्या खाक! बस एक चीज काबिज थी-पंजाब!

खून की तरह जमा शहर

अमृतसर आते-आते बस में यात्रियों की बातचीत सुनते-सुनते मन में ऐसा डर बैठ गया कि वह बस से भी डरने लगा।

बस से उतरते-उतरते फैसला ले लिया-जो भी हो, जैसे-तैसे रात अमृतसर के बस अड्डे पर काट लेगा लेकिन बस से अटारी नहीं जाएगा। साढ़े छह बजे शाम से ही बस अड्डे पर हड़बोंग मची थी। सबको ऐसी जल्दी थी कि जैसे बाढ़ में बाँध टूट गया हो और सब जान बचाने के लिए भाग रहे हों। दुकानें फटाफट बंद हो रही थीं। ठेलेवाले अपनी दुकानें बढ़ा रहे थे। खाली बसों के ड्राइवर-खलासी पास के ढाबों में जल्दी-जल्दी खाना खा रहे थे। ढाबे के मालिकों को भी जल्दी थी। इसलिए उनके नौकर भी रेस के घोड़ों की तरह हाँफ रहे थे। सबको एक ही डर था...सात बजे कर्फ्यू लगने वाला था।

रामदेव ने मूँगफली वाले का अक्षरश: अनुसरण किया। अपना सत्तू घोलकर पी गया और उसी के साथ लेट गया। मूँगफली वाला राँची का ईसाई आदिवासी था। तीन साल पहले घर से भागकर यहाँ आया था। चेहरे पर बढ़ी दाढ़ी और सिर पर गमछे के मुरैठा से उसके सरदार होने का भ्रम होता था। हँसता तो चमकीले दाँत मोतियों की तरह जगमगा उठते। निष्पाप आँखें छलछला आतीं। जेम्स 'अपने देस' के रामदेव जैसे आदमी से मिलकर खुश हो गया था। दोनों गठरी की तरह कोने में दुबके थे। और भी

बहुत गठरियाँ थीं। गुमसुम!

कर्फ्यू लग चुका था।

चादर की ओट में रामदेव ने झाँककर देखा। बाहर सब कुछ थमा था। इंजन की तरह दहाड़ता बस अड्डा लाश की तरह खामोश था। न पंछी, न हवा, न कोई पत्ता हरकत कर रहा था। चीख़ भी निकलती तो डर से बर्फ़ हो जाती। चलती गोली हवा में थम जाती। पृथ्वी का घूमना जैसे बंद हो गया था। साँसें बेआवाज़ चल रही थीं। मच्छर थे कि ग़लीज़ में बेफ़िक्री से भिनभिना रहे थे।

सन्नाटे में ही वर्दीवालों से भरी एक जीप गुज़र गई। रामदेव को लगा कि गर्दन पर से कोई धारदार चाकू गुज़र गया। 'इधर में ऐसा ही होता है।' जेम्स फुसफुसाया, 'चुप सो जाओ, पेशाब करने भी मत जाना।' रामदेव सोने की कोशिश करने लगा। दिन-भर की थकान के बावजूद उसे नींद नहीं आ रही थी।

रात के कोई ग्यारह बजे बस अड्डे पर जैसे कहर टूट पड़ा। वर्दी वाले सबों को बूट की ठोकरों से जगा रहे थे। पचास सवाल। कहाँ से आए हो? क्या मतलब है? डर से कोई हकलाया तो लात, घूँसे, बंदूक के कुंदे से ठुकाई। तीन नौजवान सरदारों को घसीटते हुए ले गए। बिहार का नाम सुनकर वे आगे बढ़ गए थे। रामदेव फिर भी थर-थर काँपता रहा। जेम्स फिर सो गया जैसे कुछ हुआ ही नहीं हो। लेकिन रामदेव के कानों में उन तीन नौजवानों की चीख जिद्दी मधुमक्खी की तरह भनभनाती रही। रफ्ता-रफ्ता सब चीजों की आदत हो जाती है। सो धीरे-धीरे शहर भी खून की तरह जम गया।

अग्गे पाकिस्तान है!

स्टेशन पर टिकट लेकर बैठा तो उसे इत्मीनान आया। उसने अपनी जेब से मुड़ा-तुड़ा, बदरंग पोस्टकार्ड निकाला, और पता पढ़ने लगा-विशुनदेव, इंदर सिंह का फारम, गाँव रानीके, भाया अटारी, जिला अमृतसर (पंजाब)। पढ़कर उसने सामने बैठे बुजुर्ग सरदार की ओर बढ़ा दिया ताकि वे रानीके जाने का रास्ता बता दें।

सरदार जी ने अफसोस में सिर हिलाया और कहने लगे, 'मैं हिंदी पढ़ना नहीं जानता। सारी उम्र उर्दू पढ़ी है। बस हिंदी समझ लेता हूँ। बता क्या है?'

'मुझे रानीके अटारी गाँव जाना है। अनजान आदमी हूँ। बिहार से आया हूँ।' रामदेव का संकोच सरदार जी की आत्मीयता से घुल गया और उसने पूरा पता पढ़ लिया।

'संतोख सिंह वाला रानीके? अग्गे अटारी स्टेशन आऊँगा, तू उत्थे उतर जाणा।

बाहर टाँगेवाले नूँ पुच्छ लईं। तू तो मुंडा-खुंडा है, पजदा-पजदा दो मील चला जाएगा। अच्छा सुण, अंबरसर दे बाहर बुर्जावालियाँ दी बस जांदी ए, तू सीधा रानीके उतर जाणा सी। गां दे बाहर की संतोख सिंह दी दो मंज़िली कोठी नजर आउगी। उत्थे पुच्छ लेणा। सामने इंदर सिंह दा फारम है।'

रामदेव इतना ही समझ पाया कि अटारी स्टेशन से दो मील पर रानीके गाँव है। गाँव के बाहर संतोख सिंह की दो मंजिली कोठी है। उसके सामने इंदर सिंह का फारम है।

'एन्नी दुरो कल्ला किंदा आ गया? बिहार के हो कि यू.पी. के?'

'बिहार। रानीके गाँव भाई को खोजने जा रहा हूँ।'

'तेरी तो मूँछें भी नहीं फूटी हैं? पुत्तर हिम्मत ही इंसान दा नाम है।'

गाड़ी रुकते ही 'अच्छा' कहकर बुजुर्ग उतर गए। रामदेव उन्हें जाते, खिड़की से देखता रहा। गाड़ी खिसकी तो टिकट-चेकर सामने था।

'टिकट?' चेकर ने यांत्रिक लहजे में पूछा।

'अटारी कितने स्टेशन है?' रामदेव टिकट थमाते हुए पूछ बैठा।

'पहली बारां आया तू?' अगला स्टेशन है। उत्थे उतर जाणा, अग्गे पाकिस्तान है! चेकर टिकट पंच कर आगे बढ़ गया।

रामदेव सन्न! कहाँ आ गया? पाकिस्तान!

स्वेरे देखेंगे

क्रीच...क्री... च। गाड़ी रुक गई। उतरकर स्टेशन के गेट की तरफ बढ़ा। बाहर निकलते ही ताँगेवाले ने उससे पूछा, 'पाकिस्तानी गाड़ी है जी? टेम तो उसी का है।' उसने भी पलटकर पूछ लिया, 'रानीके गाँव कौन-सी सड़क जाती है?'

'सीधी सड़क जाती है... आगे भी पुच्छ लेणा।'

सूरज सर पर चढ़ गया था। तेज चलने की वजह से वह पसीने-पसीने हो रहा था। पर मंजिल पर पहुँचने की खुशी ने उसे बेफिक्र कर दिया था। सड़क के किनारे गेहूँ के कटे, नंगे खेत थे। उसके गाँव की तरह ही थोड़ा तिरछा, औंधा, साफ आसमान था। हवा सोई हुई थी, गर्म बगूले सीधा उड़ते और सूखे पत्तों, धूल को ले उड़ते। सुनसान सड़क पर दूर-दूर तक कोई राही नहीं था। चारों तरफ तापमान का राज था। रामदेव का ध्यान भाई विशुनदेव की तरफ था। रोज-रोज के कर्फ्यू में चिट्ठी कैसे पहुँचती। भैया भी

चिट्ठी का इंतजार करता होगा। भैया उसे देखते ही लिपट जाएगा। वह भी आँसू नहीं रोक सकेगा। भैया तिल का लड्डू देखते ही खिल जाएगा। लेकिन भैया...उससे पहले खाने-पीने को पूछेगा। भैया घुमा-फिराकर भौजी के बारे में भी पूछेगा। वह भाई से जनार्दन से बदला लेने के लिए जरूर कहेगा...

उसे सामने सड़क के किनारे दो मंजिला मकान दिख गया। एक सरदार जी आगे-आगे जा रहे थे। उसने अपनी चाल तेज कर दी।

'भाई साहब, इंदर सिंह का फारम किधर है?' उसने पास पहुँचकर पूछा।

'किसनू मिलना? तू आया कित्थों?' सरदार जी ने खुलासा ही पूछ लिया। पर रामदेव की समझ में ठीक से न आ पाया।

'बिशुनदेव, बिहारी।' रामदेव अटपटाकर बोला।

'बात तो पल्ले पैंदी नई, चल सरपंच सरूप को चल, उत्थे जाके गल करी?' सरदार जी ने उसे पीछे-पीछे आने का इशारा किया।

परेशान रामदेव उनके पीछे-पीछे बढ़ता गया। कुछ दूर जाकर, पुरानी ईंटों वाले महलनुमा घर के सामने जाकर दोनों रुक गए। रास्ते में सरदार जी ने उसका नाम पूछ लिया, अपना नाम भी बता दिया-किरपाल सिंह। किरपाल सिंह ने आवाज दी।

'सरपंच जी, सरपंच जी, थल्ले आओ! एक परदेशी बंदा आया सी!' कुर्ता-पजामा पहने एक लंबा-तगड़ा गोरा-चिट्टा आदमी बाहर आया। उसके चेहरे पर हल्की नुकीली काली मूँछें सज रही थीं। किरपाल सिंह को देखकर मुस्कराया और उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचने लगा।

'किरपाल्या, ऐ बंदा कोनी? इनु कित्थों फड़के ले आया?'

'सरपंच जी, मैं कित्थों ले आऊंगा?' ए बंदा किसी दी खोज विच आया सी। हिंदी बोल्दा सी, तुसी समझ लो! गल-बात कर लो!'

सरपंच सरूप रामदेव की ओर मुड़ा, उसे गहरी नजरों से देखा।

'काका, क्या बात है?'

'मेरा भाई विशुनदेव इंदर सिंह के फारम पर काम करता है, बहुत दूर बिहार से आया हूँ। ये चिट्ठी है।' रामदेव ने कार्ड सरपंच सरूप के हाथ में थमा दिया। सरपंच सरूप ने पोस्टकार्ड उलट-पुलटकर पढ़ा और रामदेव को वापस थमाते हुए बोला, 'पता तो ठीक है।'

'किरपाल्या, देख पाई दी खिंच एन्नी दूर ले आई... अरे याद आया सी। एक बिहारी मुडा इंदर दे फारम ते देख्या सी... चल तुझे इंदर सिंह के पास ले चलता हूँ।' सरपंच सरूप आगे बढ़ा।

रामदेव उसके पीछे चला। किरपाल सिंह 'अच्छा' कहकर अपनी राह चला गया। तेज धूप में चलते दोनों पास ही इंदर सिंह के फार्म पर पहुँचे।

'स-सिरी अकाल जी!' एक महिला ने शालीनता से कहा।

सरपंच ने सिर हिलाया।

'स-सिरी अकाल! इंदर सिंह कहाँ गया?'

'वो तो कल सवेरे आएँगे जी। अंबरसर में कुछ काम था।'

'ये मुंडा अपने भाई से मिलने आया है। इसका भाई तेरे फारम दा काम करता है... क्या नाम बताया?'

'विशुनदेव,' रामदेव ने साफ-साफ लहजे में कहा। उसके चेहरे से उत्सुकता का लावा जैसे फूट पड़ना चाहता था। महिला ने उसे गौर से देखा।

'विशुनदेव! इस नाम का एक भैया तो था जी, तीन महीने पहले कपूरथले लौट गया। पिछले साल उसे हम अपने मामा जी के पास से लाए थे... इस साल भी बिहार से आया, पर बोलता था-दिल नईं लगता, तीन महीने पहले कपूरथले लौट गया।'

सरपंच सरूप ने रामदेव की ओर देखा। उसे लगा कि अब रामदेव रो देगा।

'देख मनजीत कौर!' सरपंच सरूप ने आजिजी से कहा, 'लड़का बिहार से आया है, परेशान है... इसके पास तेरा ही पता है।'

'सरदार जी के आने पर बात कर लेणा जी, ज्यादा वही बतलाएँगे!' कहकर मनजीत कौर मुड़ गई।

'चल मुंड्या! मेरे यहाँ ही रोटी-पानी कर लेना। स्वेरे देखेंगे!' बांसुरी क्या बोलती है?

रात धमक आई थी। दालान में किरपाल सिंह और सरपंच सरूप बातें कर रहे थे। घूम-फिरकर बात पंजाब के हालात पर ही चलती। अखबार, रेडियो के हवाले अफवाहों का विश्लेषण चल रहा था।

दालान के किनारे वाले तख्त पर चादर से मुँह ढंके लेटा, रामदेव के सामने विशुनदेव का चेहरा बार-बार कौंध रहा था। उसे रह-रहकर रुलाई आ रही थी।

सरदारनी पहले तो अच्छे से बोली पर विशुनदेव का जिक्र आते ही साफ मुकर गई-सरदार जी से बात कर लेना। अगर विशुनदेव तीन महीने पहले कपूरथले चला गया तो वहाँ से चिट्ठी जरूर लिखता। जेल में भी होता तो वहीं से लिखता। दो सौ रुपए में वह अपने भाई को कहाँ-कहाँ खोज पाएगा? कहीं भैया...आखिर रुलाई फूट पड़ी। हिचकियाँ, नाक से बहते पानी और खाँसी ने भेद खोल दिया।

किरपाल सिंह लपका और रामदेव को झकझोरकर पूछने लगा, 'ए मुंड्या, ए मुंड्या... सरपंच जी देखो!'

सरपंच सरूप भाँप गया। वह उठकर रामदेव के पास आया और दिलासा देने लगा, 'देख भाई, कल इंदर सिंह से साफ-साफ तेरे भाई का पता पूछ लेंगे। रुपए-पैसे की जरूरत हुई तो दे देंगे! तू कपूरथले जाकर भाई से मिल लेना। क्यों किरपाल सिंह?'

'हंजी, मुंडे नू मदद जरूर करनी चाहिए। जे ग्रीब लोग हैं...'

कब रात गुजर गई, सोचते-सोचते रामदेव को पता ही नहीं चला।

सरपंच सरूप को देखते ही इंदर सिंह चिल्लाया, 'आओ महाराज! मनजीत कौर कह रही थी उस बिहारी मुंडे के बारे में। मैं अंबरसर चला गया था। दोनों पुत्तरों पर दिल लगा रहता है। रात जाकर टेलीफोन से बात हुई। जी को चैन आया। स्वेरे वहाँ से चला। बस समझो अभी आ ही रहा हूँ... मैं भी मूरख! चलो अंदर बैठते हैं... कुछ चाय-साय भिजवाना, कहकर इंदर सिंह शुरू हो गया, 'हंजी, लड़का बड़ा भला था। पिछले साल भी मेरे पास था। इस साल आया तो उखड़ा-उखड़ा रहता था। दिल नहीं लगता था। टिक नहीं पाया। चल दिया। कपूरथले मनजीत के मामा के यहाँ गया होगा। ऐसा ही बोल रहा था। दो महीने हो गए... अब आप कहो तो इस मुंडे को खर्चा-पानी दे दूँ।'

इंदर सिंह की वाचालता से सरपंच सरूप शक में पड़ गया। कल मनजीत कौर कह रही थी, लड़के को गए तीन महीने हुए। यह कहता है दो महीने हुए। और यह खर्चा-पानी क्यों देना चाहता है?

'इंदर सिंह, लड़का जिंदा है या नहीं?' सरपंच ने सधी आवाज में पूछा।

इंदर सिंह के चेहरे पर जैसे स्याही पुत गई। रामदेव का जी धक्क! इंदर सिंह जबरन अपने चेहरे पर कांइयाँ मुस्कराहट लाता बोला, 'मरने की बात कहाँ से आ गई?' ...लड़का जरूर जिंदा होगा जी। कपूरथले होगा या और कहीं चला गया होगा! भैया लोगों का क्या ठिकाना? आज यहाँ काम किया, कल वहाँ...'

सरपंच सरूप के पीछे खड़ा रामदेव सिसकियाँ लेने लगा। मनजीत कौर चाय की

ट्रे लेकर कमरे में घुसी। रामदेव को रोता देखकर, पल-भर के लिए ठिठक गई। मनजीत कौर ने गहरी नजरों से पति को देखा और उसकें होंठ भिंच गए। यंत्रवत ट्रे को सेंटर टेबल पर रख, तेजी से मुड़कर अंदर चली गई।

सरपंच को साफ लगा कि इंदर सिंह झूठ बोल रहा है। मनजीत कौर भी छिपा रही थी। ऐसे झूठ बोलने की जरूरत क्या है? विशुनदेव जिंदा नहीं है। सरपंच की आत्मा पर ठक से हथौड़े जैसी चोट लगी, वह गुस्से से तिलमिला उठा।

'साफ बता इंदर सिंह, विशुनदेव जिंदा है या नहीं? जिंदा है तो उसका पता दे!'

'कह तो दिया, वह यहाँ से चला गया। जिंदा ही होगा।'

'इस लड़के पर रहम कर। इतनी दूर से आया है। झूठ बोलने से क्या फायदा?'

'ओय सरूपे, तू मुझे झूठा कहेगा?' इंदर सिंह भड़क उठा, 'सरपंच से हार गया तब भी अकड़ नहीं गई। तू होता कौन है जो मुझसे पूछने चला आया? मैं तुझे कुछ नहीं बताऊँगा! बड़ा आया है लड़के की तरफदारी करने वाला!'

सरूप अवाक! रामदेव बुक्का मारकर रो पड़ा। अचानक रामदेव उठा और इंदर सिंह के पाँव पर गिर पड़ा!

'मालिक!' रोता रामदेव चीखने लगा, 'बता दीजिए मालिक, मेरा भैया कहाँ हैं?... बहुत उपकार होगा मालिक! बता दीजिए मालिक... मालिक...'

'तू पत्थर है...इंदर सिंह!' सरपंच सरूप घृणा से उफन उठा, 'लंबा-चौड़ा फारम, इतना पैसा, पर इंसानियत जरा भी नहीं... परदेशी की तू मदद नहीं कर सकता... खैर चल मुंडे!'

सरपंच सरूप उठ खड़ा हुआ। आगे बढ़कर रामदेव को झकझोरकर उठाया।

'भाई साहब, रुकना!'

अंदर से मनजीत कौर की तेज आवाज आई। दरवाजे से ही मनजीत कौर ने एक झोला सपरंच के पाँव के पास फेंका! उफनती मनजीत कौर पर जैसे दौरा पड़ गया हो!

'ये विशुनदेव का सामान है... वह दुनिया में नहीं है!' कहते-कहते मनजीत कौर फूट-फूटकर रोने लगी। हिचकियों के बीच उसने कहा, 'मुझसे बोलकर गया था कि अंबरसर से घरवालों के लिए कपड़े लेने जा रहा हूँ, देस जाना है। अंबरसर से लौटकर आता तो यहाँ से पैसे लेकर जाता... तीन बजे दिन में गया। बस बिगड़ने से शाम हो गई। छेड़हट्टा के पास रोककर मार-काट हुई... उसी में...'

गूँगे रामदेव की आँखों से आँसू लुढ़क रहे थे। सरपंच सरूप मनजीत कौर की बात सुनकर स्तब्ध था और अपराधी की तरह इंदर सिंह की आँखें फर्श में गड़ी हुई थीं।

'मैं तीन दिनों तक रोती रही... मेरे भी बेटे हैं... ये फँस जाने के डर से बात छिपा रहे थे। कल रात-भर हम दोनों झगड़ते रहे-छिपाना क्या, वह भी किसी का बेटा है, भाई है... कल मैं भी झूठ बोली...हमें माफ करो सरपंच जी!' मनजीत कौर के अंदर बैठी माँ ने उफान मारा। उसने आगे बढ़कर रामदेव को छाती से लगा लिया। अपनी ओढ़नी से उसके आँसू पोंछने लगी।

बीच में पड़े विशुनदेव के झोले से उसकी बाँसुरी झांक रही थी। सब चुप थे। आँसू की तरह बांसुरी भी जैसे कुछ बोल रही थी। बाँसुरी क्या बोल रही थी, कोई समझ नहीं पाया...

तू यहाँ कब तक भुगतता रहेगा?

देर तक उस दिन नहर के किनारे बैठा रहा। नहर का कलकल पानी, आजाद हवा... सब बेकार! सरपंच के घर की तरफ चल पड़ा। कल उसे रुपए मिल जाएँगे-दो हजार। सरपंच साहब उसे अमृतसर में दिल्ली वाली बस में बिठा देंगे। अमृतसर के लिए आज उनको याद दिला देनी चाहिए। वह सोचता आगे बढ़ा जा रहा था कि फौज की तीन जीपें गुजरीं। लाउड स्पीकर से पंजाबी में कुछ घोषणा की जा रही थी। थोड़ी दूर और गया कि और तीन जीपें गुजरीं। रामदेव घबरा गया। जल्दी-जल्दी सरपंच के घर की ओर बढ़ने लगा।

सरपंच के घर के पास पहुँचकर वह हाँफ रहा था।

'सरपंच साहब, पाकिस्तानी फौज घुस आई क्या?'

'नहीं, काका,' सरपंच सरूप ने लंबी साँस ली, 'अपनी फौज है... यह बहुत बुरा हुआ!'

'क्यों?' रामदेव ने हौले से पूछा।

'तुम क्या समझो? हम बॉर्डर के लोग समझते हैं! फौज आती है, जाती है... पर जो खलिश छोड़ जाती है, उसका कोई इलाज नहीं,...चल इंदर सिंह के पास चलते हैं!'

फँसे रामदेव के लिए कोई उपाय नहीं था। टी.वी. पर जालंधर, लाहौर की खबरें सुनते-देखते रहो। कुछ मालूम नहीं, कहाँ क्या हो रहा है। पूरे पंजाब को जैसे सुनबहरी हो गया हो। वाघा, अटारी जैसे फौजी छावनी बनी थीं। घरों में चीख डर से दुबकी पड़ी

थी। हवा की भी तलाशी चल रही थी। घृणा के अंधड़ में मौन ही पत्तियों की भाषा थी। परिंदे की तरह अफवाहें उड़तीं। मौत की खबर चीख भी नहीं बन सकती थी। लोग कबूतरों की तरह दुबके रहते। रात भी जगी रहती। हरी वर्दी में लोग सन्नाटे को कुचलते रहते।

तलाशियों ने मालकिन को तोड़ दिया था। इंदर सिंह टी.वी. के पास बैठे रहते। बीच-बीच में रेडियो पर भी खबरें सुनते। रामदेव रसोई में जाकर मालकिन की मदद कर देता। रोना एक सिलसिला बन गया था। सरपंच जी ढांढ़स देने आए।

'किरपाल का भाई अंबरसर में सेवादार था... किरपाल सब्र कर सकता है! दिल्ली में सब ठीक-ठाक है, आखिर राजधानी है। तू नाहक परेशान है, मनजीत कौर! हिम्मत रख!'

'कैसे चुप हो जाऊँ! एक फूल टूटता है तो हर पत्ता रोएगा... उस पार के गोले दगते थे तो हमारे में जोश होता था। अब तो इधर से ही...कोई इस बार उन्हें बेटों की तरह कलेजे में क्यों नहीं लगाता?... जिनको देख हिम्मत होती थी, वही हमें डराते हैं। बस अब तो वाहे गुरु का आसरा है!' रामदेव को रोती-कलपती मनजीत कौर माई की तरह लगी। दिल्ली में बसे उनके दोनों बेटों क्या हुआ होगा?

तूफान की तरह गुजरे वे दिन। बारह दिन बाद कर्फ्यू खुला तो आशंका की तेज बयार थी। किसका, कौन मरा, कहाँ चला गया? आखिर इंदर सिंह ने कहा, 'अंबरसर जाना है, तू यहाँ कब तक भुगतता रहेगा?'

सफर तमाम नहीं

मलवे के शहर अमृतसर में आतंक का तना हुआ छाता था। आँखों के दिए बुझे-बुझे थे। मरघट-सा सन्नाटा। बस की आरामदेह सीट पर बैठा रामदेव खिड़की से चेहरा सटाए देख रहा था। इंदर सिंह और सरपंच सरूप नीचे खड़े थे। हचके के साथ बस आगे बढ़ी। रामदेव ने झट हाथ जोड़ दिए।

उनके ओझल होते ही उसने लंबी साँस ली। आँखें बंद करते ही जैसे माई सामने खड़ी हो गई। वह झूठ बोलना चाहता है-भैया का पता नहीं चला। पर दो हजार का रुपए क्या करेगा! गोद में पड़ा विशुनदेव का झोला भारी लगने लगा। बाँसुरी झोले से बाहर झाँक रही थी। विशुनदेव का चेहरा उसके सामने घूम गया। अचानक उसका माथा घूमने लगा-आँसुओं में तब मनजीत कौर का चेहरा, किरपाल सिंह, इंदर सिंह का झुर्रियों की तरह लटकता चेहरा सामने आता और ओझल हो जाता...फिर दहाड़

मारकर रोती माई...बिस्तर पर मुँह देकर रोती भौजी...

उसे जोर से कंपकंपी आई। रोम-रोम खरखरा उठा। 'नहीं!' वह धीरे से बुदबुदाया। आगे की सीट का हैंडिल उसने मजबूती से पकड़ लिया। गुर्राती बस आगे बढ़ती गई। आगे बढ़ना ही था, भैया एक्सप्रेस का सफर तमाम नहीं हुआ था।

अरुण प्रकाश

जन्म	:	22 फरवरी, 1948, बेगूसराय, बिहार
प्रकाशन	:	भैया एक्सप्रेस, जलप्रांतर, मंझधार किनारे, लाखों के बोल सहे, विषम राज, स्वप्न द्वार (कहानी संग्रह) कोंपल कथा (उपन्यास)
सम्मान	:	साहित्यकार सम्मान (हिन्दी अकादमी), रेणु पुरस्कार, दिनकर सम्मान, सुभाष चंद्र बोस कथा सम्मान, कृष्ण प्रताप स्मृति कथा सम्मान।